इकाई 9 भारत में वानिकी : कृषि सेक्टर से संबद्धता

संरचना

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 वनों के लाभ

9.3 भारत में वानिकी का विकास

- 9.3.1 स्वतंत्रता पूर्व अवधि
- 9.3.2 राष्ट्रीय वन नीति, 1952
- 9.3.3 राष्ट्रीय वन नीति, 1988
- 9.3.4 भारत में वानिकी का बदलता हुआ स्वरूप

9.4 वन कृषि अंतःसंबद्धता

- 9.4.1 भूमि उपयोग स्वरूप
- 9.4.2 मानव पारितंत्र
- 9.4.3 पारिस्थितिकी पारितंत्र

9.5 सामाजिक वानिकी के प्रकार

- 9.5.1 फार्म वानिकी
- 9.5.2 विस्तार वानिकी
- 9.5.3 कृषि वानिकी
- 9.5.4 मनोविनोद वानिकी

9.6 संयुक्त वन प्रबंधन

9.7 सारांश

9.8 शब्दावली

9.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

9.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए वानिकी के योजनाबद्ध विकास का महत्त्व समझा सकेंगे;
- तुलनात्मक अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में वानिकी में भारत की स्थिति बता सकेंगे;
- उन नीतिगत पहलुओं का वर्णन कर सकेंगे, जिन्होंने भारत में वानिकी के विकास को मूर्त रूप दिया;

- कृषि सेक्टर और वानिकी के बीच अंतः संबद्धता की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकेंगे;
- भारत में अनुसरण की गई सामाजिक वानिकी पद्धतियों की रूपरेखा बता सकेंगे; और
- संयुक्त वन प्रबंधन (JFM) की वैकल्पिक संस्थागत क्रियाविधि की चर्चा कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

इकाई 2 में हमने देखा कि 1950 से 2008 के दौरान भारत में वनभूमि का अनुपात 1950 में 14.2 प्रतिशत से बढ़कर 2008 में 22.8 प्रतिशत हुआ। हमने यह भी देखा कि वन क्षेत्र का संरक्षण और विस्तार एक स्वस्थ पारिस्थितिकी संतुलन बनाए रखने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इस इकाई में हम वानिकी विस्तार से संबंधित मुद्दों पर अधिक ध्यान केंद्रित करेंगे। वनों से विभिन्न आर्थिक और अन्य लाभों की रूपरेखा से प्रारंभ करते हुए हम उन कुछ नीतियों/योजनाओं के बारे में जानेंगे जिन्हें भारत में वनों के संवर्धन के लिए क्रियान्वित किया गया है। फिर हम ''सामाजिक वानिकी'' की योजना की चर्चा करेंगे जिसे दोनों वन आवरण क्षेत्रफल विस्तार करने और जनसाधारण में तथा कुल मिलाकर संस्थाओं में ''वानिकी संस्कृति के संवर्धन'' के रूप में क्रियान्वित किया गया है। अंत में, इस दिशा में लागू किए गए संस्थागत तंत्र के नए उपाय के रूप में हम संयुक्त वन प्रबंधन के लाभ और विशेषताओं के बारे में पढ़ेगे। परंतु इन पहलुओं का अध्ययन करने से पहले हम कुल क्षेत्रफल में विश्व में अन्य देशों की तुलना में भारत की स्थिति पर एक नज़र डालेंगे। यह तुलनात्मक संक्षिप्त विवरण भारत में वानिकी का विस्तार करने का महत्त्व समझने के लिए अपेक्षित परिप्रेक्ष्य निर्धारित करेगा।

संयुक्त राष्ट्र के विश्व वन संसाधन आकलन (FRA 2010) रिपोर्ट के अनुसार 2010 में भारत का कुल वन क्षेत्रफल 68 मिलियन हेक्टयर (mha) था। उसके कुल भौगोलिक क्षेत्रफल (328.73mha) के अनुपात के रूप में वन आवरण का प्रतिशत 20.7 प्रतिशत है। परंतु विश्व वन क्षेत्रफल के प्रतिशत के रूप में भारत का अंश 1.7 प्रतिशत के निम्न स्तर पर है। (तालिका 9.1) फिर भी भारत विश्व के उन 10 शीर्ष देशों में है जो कुल विश्व वन क्षेत्रफल के दो-तिहाई (66.6 प्रतिशत) को अपने भूक्षेत्र में समाये हुए हैं। शेष देशों को साथ लेने पर उनका विश्व वन आवरण का एक-तिहाई अंश है। यह अपने आप ही न्यायसंगत स्थिति या उसके विश्व जनसंख्या अंश से आनुपातिक स्थान प्रदान नहीं करता, क्योंकि अधिक छोटे देशों का उनकी कुल जनसंख्या और दूसरी ओर भौगोलिक क्षेत्रफल की सीमा के अनुपात में वन आवरण अधिक हो सकता है। दूसरे शब्दों में, चूंकि राष्ट्र की कुल जनसंख्या और उनकी आवश्यकताओं से वन संसाधनों का महत्त्वपूर्ण संबंध होता है, इसलिए प्रतिव्यक्ति वन क्षेत्रफल उसकी संवेदनशीलता समझने के लिए अधिक सुसंगत सूचक है।

तालिका 9.1: वानिकी में विश्व में भारत का स्थान

देश	वन क्षेत्रफल (mha)	विश्व शेयर (%)	जनसंख्या	वन प्रति व्यक्ति (ha)
रूस संघ	809	20.1	142.9	5.66
ब्राजील	520	12.9	190.7	2.73
कनाडा	310	7.7	34.6	8.96
यू.एस.	304	7.5	312.3	0.97
चीन	207	5.1	1339.7	0.15
कांगो	154	3.8	66.0	2.33
आस्ट्रेलिया	149	3.7	22.7	6.56
इंडोनेशिया	94	2.3	237.6	0.40
सूडान	70	1.7	30.9	2.27
भारत	68	1.7	1210.2	0.06
अन्य	1347	33.4	3376.0	0.40
विश्व	**4032**	**100.0**	**6969.6**	**0.58**

नोट : ग्लोबल फोरेस्ट रिसोर्स एसेसमेंट रिपोर्ट, 2010–एफ.ए.ओ. द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार उन देशों के वन क्षेत्रफल के अनुसार शीर्ष दस देश (लिंक : http://www. Tao.org/foresty/fra/enc) जनसंख्या के आंकड़ों का स्रोत विक्कीपीडिया है और आंकड़े वर्ष 2010 के हैं।

इस तथ्य के होते हुए भी कि विश्व में शीर्ष दस देशों में भारत का स्थान है, भारत की स्थिति निराशाजनक है। यद्यपि इस संबंध में विश्व अनुपात 0.58 हेक्टेयर है। (शीर्ष 10 को छोड़कर शेष देशों का तद्नुरूपी अनुपात भी 0.40 हेक्टेयर है)। भारत के लिए यह निम्नतम 0.06 हेक्टेयर पर है। स्पष्टतः विश्व जनसंख्या के 17.4 प्रतिशत के अंश से भारत का वन आवरण अंश इतना कम है कि अन्य देशों के तुल्य अनुपातों के समीप कहीं भी नहीं ठहरता है। देश में बहुत अधिक जनजाति जनसंख्या भी है जो वनों के किनारों में वास करती है और उसके संसाधनों पर ही अपना जीवन निर्वाह करती है। इन सभी कारकों को जानते हुए भारत सरकार ने अपने कुल भूमि क्षेत्रफल के 33 प्रतिशत तक कुल वन आवरण बढ़ाने का लक्ष्य निर्धारित किया था। यह लक्ष्य 1952 की देश की पहली राष्ट्रीय वन नीति द्वारा निर्धारित किया गया था। लगभग 2010 तक 21 प्रतिशत की उपलब्धि अभी तक उस लक्ष्यों की प्राप्ति में त्रुटि का द्योतक है। GDP में वानिकी का योगदान भी 1950-60 में लगभग 2 प्रतिशत से घटकर 2000-08 में 0.9 प्रतिशत रह गया। हाल ही के समय में वनों का महत्त्व न केवल उसके आर्थिक योगदान से देखा जा रहा है बल्कि पर्यावरणीय और पारिस्थतिकी पहलुओं से भी देखा जाता है। फिर भी, GDP में वानिकी का ह्रासमान अंश भारत में इस सेक्टर को दी गई सापेक्ष निम्न प्राथमिकता दिखाती है। यह इस कारण से भी है कि इन दिनों ''हरित क्रांति'' को महत्त्व दिया गया है। परंतु इस निराशाजनक परिदृश्य में एक आशा की किरण है। वन आवरण में वार्षिक निवल उपलब्धि के आधार पर GDP 2010 रिपोर्ट के अनुसार, भारत ने अपनी स्थिति में सुधार किया है, 1999-2000 के दौरान इसका पाँचवाँ स्थान था अब 2000-10 के दौरान तीसरा स्थान है। पहली अवधि में 0.22 प्रतिशत से वार्षिक निवल उपलब्धि की तुलना में दूसरी अवधि में 0.46 प्रतिशत हुई। यह हाल ही के वर्षों के दौरान देश की स्थिति दर्शाता है। कुछ ऐसे देश भी हैं जो अपना वन आवरण बढ़ाने में विफल प्रायः रहे हैं। परंतु अंतिम दशाब्दी में प्राप्त वनों की वृद्धि की अपेक्षाकृत उच्च दर बनाए रखना या 2012 तक 33 प्रतिशत वन आवरण प्राप्ति एक वास्तविकता का रूप नहीं ले सकती है।

9.2 वनों के लाभ

भाग 9.1 में हमने वनों के दो सामान्य लाभों का उल्लेख किया है। अर्थात् (i) पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने में उसकी उपयोगिता, और (ii) वनों में और उसके इर्द-गिर्द रहने वाले गरीब जनजाति के लोगों की आजीविका के लिए संसाधन प्रदान करना। उदाहरण के लिए, वे विभिन्न उद्योगों, जैसे रेलवे, रक्षा, निर्माण कार्य, हस्तकला और घरेलू प्रयोग के लिए कच्चा माल प्रदान करते हैं। इसके माध्यम से वे रोज़गार भी पैदा करते हैं और देश के निर्यात में योगदान करते हैं। वनों से विभिन्न लाभों को विकल्पतः निम्न प्रकार सामान्य समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

i) **स्वच्छ वायु का उत्पादन, ऊर्जा का उत्पादन और वर्षा को प्रेरण** : वन आक्सीजन पैदा करते हैं, पर्यावरण प्रदूषण रोकते हैं, वन्य जीवों और पक्षियों को आश्रय देते हैं और देश की सुन्दरता बढ़ाते हैं। प्रकाश संश्लेषण द्वारा वे सौर ऊर्जा को विभिन्न प्रकार की ऊर्जा जैसे भोजन और ईंधन में बदलते हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि भारत जैसे अल्प विकसित देशों में हमारी कुल ऊर्जा आवश्यकताओं का लगभग 40 प्रतिशत वनों से मिलता है। वे वायु मंडल की नमी को बदलकर अपने प्रभाव से वर्षा लाने में सहायता करते हैं। इसलिए सभी को साथ मिलाएं तो लाभ वनों के पर्यावरणीय लाभ के अधीन सम्मिलित किए जा सकते हैं।

ii) **मृदा अपरदन निवारण और नमी धारण** : वन मृदा में और वायु मंडल में भी नमी धारण तथा मृदा अपरदन निवारण में उपयोगी है। वे क्षेत्र को बंजर भूमि बनने से रोकने में भी उपयोगी होते हैं और वर्षा ऋतु के दौरान बाढ़ रोकने में खासतौर पर उपयोगी होते हैं। इन लाभों को वनों के जलीय लाभ कहा जाता है।

iii) **जनजाति के गरीबों की आय और आजीविका आवश्यकताओं का स्रोत प्रदान करना** : यह अनुमान लगाया गया है कि मनुष्यों के उपयोग के लिए अति आवश्यक ईंधन लकड़ी की आपूर्ति करने के अलावा पशुओं की चारा आवश्यकताओं का 30 प्रतिशत की आपूर्ति वन करते हैं। विशाल मात्रा में लघु वन उत्पादों (MFP) की आपूर्ति वनों से होती है और उनके इर्द-गिर्द रहने वाले बहुत से कबीलों के रोज़गार और आय के स्रोत भी वन हैं। इस प्रकार वन गरीबों की आय और आजीविका के स्रोत और पशुओं के खाद्य का मुख्य स्रोत है।

iv) **औषधीय पादप और आर्थिक महत्त्व की अन्य किस्में** : यह अनुमान लगाया गया है कि औषधीय सामग्रियों की आवश्यकता का लगभग 40 प्रतिशत जंगली पौधों, पशुओं, सूक्ष्म जीवों आदि से प्राप्त सक्रिय संघटक होते हैं। ये वनों में स्वतंत्र रूप से उगते हैं और रहते हैं। वनों से मनुष्य जाति के यह लाभ प्राप्त करने में वनों को विश्व का प्राकृतिक ''विशाल रासायनिक कारखाने'' के रूप में वर्णित किया गया है। वनों के परंपरागत उत्पादों में निर्माण सामग्री, फर्नीचर और ग्रामीण ऊर्जा की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए काष्ठ और ईंधन लकड़ी भी शामिल है।

v) **मनोरंजनात्मक और राजस्व लाभ** : वनों को वन्य जीव अभयारण्य और नेशनल पार्क जैसे मनोरंजनात्मक स्थल स्थापित करके शहरी जनसमुदाय से प्रभावकारी

अंतर संबंध उत्पन्न करने के लिए प्रयुक्त किए जा सकते हैं। राजस्व उत्पन्न करने के अलावा वे लोगों में, विशेषकर बच्चों में, वन्यजीव संरक्षण के बारे में जागरूकता उत्पन्न करने में सहायता करते हैं। हम बाद में ''सामाजिक वानिकी'' के अधीन इस लाभ पर विस्तार से पढ़ेंगे।

उपर्युक्त लाभों के प्रकाश में वन विकास और विस्तार में निवेश निःसंदेह युक्ति संगत है। शहरी क्षेत्रों में मानव निर्मित कंक्रीट के जंगल की तुलना में प्राकृतिक वनों का वर्णन ज्ञान और शांति के भंडार के रूप में किया जाता है। सरकार के सक्रिय नीति उपायों से वन क्षेत्र कैसे व्यायिग्रस्त हुआ है? अब हम अगले अनुभाग में वनों के संवर्धन के नीतिगत आयामों की संक्षिप्त समीक्षा करेंगे।

बोध प्रश्न 1

1) आप भारत में कुल वन आवरण का वर्तमान प्रतिशत किस श्रेणी में रखेंगें : (क) 20-25 प्रतिशत, (ख) 25-30 प्रतिशत, (ग) 30-35 प्रतिशत।

.....

.....

.....

.....

2) विश्व वानिकी आवरण में भारत का अंश क्या है : (क) 1.1 प्रतिशत, (ख) 1. 4 प्रतिशत, (ग) 1.7 प्रतिशत, (घ) 2 प्रतिशत।

.....

.....

.....

.....

3) मानव जाति के लिए वनों के छह लाभ बताइए।

.....

.....

.....

.....

9.3 भारत में वानिकी का विकास

भारत में 19वीं शताब्दी से ही विधायी और अन्य उपायों द्वारा वनों का विकास हुआ है। इन्हें स्वतंत्रता से पहले की अवधि और स्वतंत्रता के बाद की अवधि के अधिनियमों तथा उपायों के अधीन वर्गीकृत किया जा सकता है। यद्यपि स्वतंत्रतापूर्व पहल कार्यों में तकनीकी प्रशासन और वनों के प्रबंधन के लिए आधार स्थापित हुआ गया था, स्वातंत्र्योत्तर पहल कार्यों में राष्ट्रीय उद्देश्य प्राप्त करने के लिए उन्हें पुनः सक्रिय किया गया।

9.3.1 स्वतंत्रता पूर्व अवधि

ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन काल के दौरान भारतीय वनों का व्यापक वाणिज्यिक दोहन किया गया। परंतु शीघ्र ही यह महसूस किया गया कि यदि वनों के संरक्षण और पुनर्जनन संवर्धन के उपाय आरंभ नहीं किए जाते हैं तो ये विनाश अस्थिरता के मोड़ पर ले जाएगा। **पहला**, भारतीय वन अधिनियम 1865 में पारित किया गया था। अधिनियम ने वनों को दो श्रेणियों अर्थात् परिरक्षित और रक्षित में वर्गीकृत किया। वर्ष 1866 में देश में वन संसाधनों की रक्षा करने के उद्देश्य से वन विभाग बनाया गया। 1878 में 1865 के अधिनियम को संशोधित कर वनों का तीन श्रेणियों में, अर्थात् (i) आरक्षित वन; (ii) रक्षित वन; और (iii) ग्राम वन में वर्गीकरण किया गया। उसी वर्ष पहला वन विद्यालय (फॉरेस्ट स्कूल) देहरादून में प्रारंभ किया गया। वन अधिकारियों की भर्ती के लिए 1891 में प्रांतीय वन सेवा प्रारंभ की गई। 1894 में सरकार ने करदाताओं को लाभ प्रदान करने का उद्देश्य पूरा करने और वनों के समीप और उसके अंदर रहने वाले लोगों के लाभ विनियमित करने के लिए राज्य की संपत्ति के रूप में वनों का प्रशासन किए जाने की घोषणा करते हुए अधिसूचना जारी की। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की अधिकांश अवधि के इन विकास कार्यों का यह समय भारत में वैज्ञानिक वानिकी का ऊषा काल सिद्ध हुआ। इन अवधि के दौरान वानिकी की व्यवस्था, उसके प्रबंधन के मूल में स्थायी उपज सिद्धांत के साथ वाणिज्यिक आधार पर की गई। वन कार्य योजना तैयार करने की पद्धति, मंडल (वन प्रशासन की इकाई) में समस्त वन शामिल करते हुए [10 से 15 वर्ष की मध्यम अवधि योजना], वन प्रबंधन और विकास के तकनीकी तथा आर्थिक पहलू स्पष्ट करते हुए वनों के प्रबंधन के लिए लागू की गई थी। इन संस्थागत तंत्रों की स्थापना ने तकनीकी आधार पर वन प्रबंधन सुव्यवस्थित करने के लिए मार्ग प्रशस्त किया। परंतु काष्ठ का निष्कर्षण वनों का मुख्य कार्य माना गया था। इन सभी प्रयोगों में रक्षा प्रयोग के लिए काष्ठ के निष्कर्षण को प्राथमिकता दी गयी।

1921 में वन प्रांतीय विषय बनाए गए। काफी सीमा तक इससे वन प्रशासन का राष्ट्रीय स्वरूप का ह्रास हुआ। भारत वन अधिनियम, 1927 [जिसने चौथी श्रेणी अर्थात् गैर-सरकारी (निजी) वन वर्गीकृत किया, पहले केवल तीन वर्गीकरण थे] के पुनः अधिनियमन के बाद 1878 का पिछला अधिनियम ''पुरानी वननीति'' के नाम से उल्लेख किया जाने लगा। 1927 के नए अधिनियम के अधीन आरक्षित वनों में वृक्षों का अनधिकृत पातन, खदान, चराई और आखेटन जुर्माना और कारावास सहित दंडनीय बनाया गया था। कार्य योजना पर आधारित वैज्ञानिक वन प्रबंधन की पद्धति काटे जाने वाले वृक्षों के अंकन के लिए न्यूनतम घेर, प्रति हेक्टयर काटे जाने वाले वृक्षों की संख्या आदि पर निर्धारित दिशा-निर्देश जारी हुए। इस तरीके में वन का प्रबंधन द्वितीय विश्व युद्ध तक जारी रहा। दो विश्व युद्धों, विशेषकर द्वितीय, से वन प्रबंधन में पिछले दशकों में की गई प्रगति को बहुत हानि पहुंची। युद्ध अवधि के दौरान तारकोल उत्पादन बढ़ाया गया और वन आधारित उद्योग काफी संख्या में उत्पन्न हुए। सड़कें बनाने और रेल लाइनें बिछाने के लिए वन काटे गए। वनों से काष्ठ व्यापक रूप से काष्ठ के स्लीपर बनाने में प्रयोग किया गया। कार्य योजना के विनियम की उपेक्षा की गई और टिकाऊ उपज सिद्धांत का अनुपालन नहीं किया गया। काष्ठ का अतिदोहन और खराब पुनर्जनन के परिणामस्वरूप सरकारी और निजी क्षेत्रों के स्वामित्व/नियंत्रण के अधीन वन क्षेत्र की क्षति हुई। वानिकी प्रबंधन संवर्धन के लिए आगे विकास मुख्यतया स्वातंत्र्योत्तर वर्षों में ही दिखाई पड़ता है।

9.3.2 राष्ट्रीय वन नीति, 1952

पहली राष्ट्रीय वन नीति (NFP) स्वातंत्र्योत्तर अवधि में 1952 में बनाई गई थी। इसमें यह भी स्वीकार किया गया कि पुरानी वन नीति के बहुत से प्रावधान अच्छे थे और इसलिए उन्हें जारी रखा जाना चाहिए। पहली राष्ट्रीय वन नीति ने पुरानी वन नीति के अधिकांश तत्वों को रखा, परंतु कुछ परिवर्तनों का समावेश किया, जो मध्यवर्ती समयावधि में परिवर्धनों के कारण आवश्यक हो गए थे। उदाहरण के लिए, सबसे अधिक विशेष रूप से, नई नीति ने वनों की कटाई से कृषि योग्य भूमि के अन्धाधुंध विस्तार को हतोत्साहित किया। इस उद्देश्य के लिए उनके प्रकार्यात्मक मानदंड पर आधारित नए अधिनियम द्वारा किया गया पुनः वर्गीकरण उल्लेखनीय है। पुनःवर्गीकरण द्वारा निर्धारित वनों की किस्में हैं, जैसे (i) रक्षित वन, (ii) राष्ट्रीय वन, (iii) ग्राम वन, और (iv) वृक्ष भूमि। संतुलित और संपूरक भूमि प्रयोग पर आधारित प्रणाली विकसित करने पर बल देते हुए नीति ने निम्नलिखित जोर दिया :

i) ''स्थानांतरी कृषि'' पद्धति के हानिकारक तत्वों से जनजाति के लोगों को अवगत कराना। (यह ऐसा तरीका है जिसमें वन के क्षेत्र का पातन किया जाता है और जलाया जाता है ताकि साफ की गई भूमि पर फसलें उगाई जा सकें);

ii) सभी रैकों के वन कर्मियों को अपेक्षित प्रशिक्षण देना;

iii) वन कानूनों में पर्याप्त प्रावधानों की व्यवस्था कर वन प्रशासन की क्षमता बढ़ाना;

iv) वनों में पशु चराई नियंत्रित करना; और

v) वानिकी और वन उत्पाद उपयोग में अनुसंधान प्रोत्साहित करना।

इस प्रकार NFP-1952 ने उपलब्ध वन भूमि के इष्टतम प्रयोग पर बल दिया। जबकि उसने (मृदा अपरदन रोकने, बाढ़ नियंत्रण और देश की भौतिक और जलवायु संतुलन संवर्धन में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखकर) रक्षित वनों के संवर्धन पर विशेष ध्यान दिया। नीति ने सरकारी, सार्वजनिक और निजी एजेंसियों के स्वामित्व की भूमि में वृक्ष आवरण के विस्तार पर भी बल दिया।

9.3.3 राष्ट्रीय वन नीति, 1988

पहली राष्ट्रीय वन नीति के अधिनियम और 1980 के दशक की मध्यवर्ती अवधि के दौरान दूरगामी परिवर्तन हुए जिनका भारत में पर्यावरण संबंधी स्थिरता और पारिस्थितिकी संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव रहा। इसके अतिरिक्त बड़े परिवर्तनों में एक जो इस दौरान हुआ, वह 1976 में भारत के संविधान का 42वां संशोधन अधिनियम था जिसने एक बार फिर वानिकी को ''समीवर्ती सूची'' में रख दिया। वनों के संरक्षण और विकास का राष्ट्रीय स्वरूप पुनर्स्थापित करने के अलावा, इस संशोधन (प्रविष्टि सं. 48A) में राज्य से वनों और वन्य जीवों का संरक्षण कर पर्यावरण की रक्षा करने तथा सुधारना अपेक्षित है। इसके अलावा, एक अन्य खंड (प्रविष्टि सं. 51क) द्वारा संशोधन सभी नागरिकों के लिए वन जीवों सहित प्राकृतिक पर्यावरण संरक्षित करना और सुधारना अनिवार्य बनाता है। इन परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए 1988 का NFP अपने उद्देश्यों में निम्नलिखित पर बल देता है :

i) विद्यमान वनों और वन भूमि का संरक्षण;

ii) पहाड़ी ढलानों/नदियों/झीलों/जलाशयों/समुद्र तटों और अर्धशुष्क, शुष्क और मरुस्थल स्थानों पर वन और वनस्पति आवरण में वृद्धि करना;

iii) अच्छी और उत्पादनकारी कृषि भूमि के वानिकी में परिवर्तन को हतोत्साहित करना;

iv) सड़कों, रेलवे लाइनों, नदियों/सरिताओं/नहरों और संस्थागत या निजी स्वामित्व के अधीन अन्य अनुप्रयुक्त भूमि के किनारे वनरोपण प्रोत्साहित करना; और

v) शहरी और औद्योगिक क्षेत्रों में हरित पट्टियाँ बढ़ाना।

9.3.4 भारत में वानिकी का बदलता हुआ स्वरूप

योजना युग के प्रारंभ में वानिकी का महत्त्व मुख्यतया वाणिज्यिक था। मुख्य उद्देश्य वन आधारित उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति करना था। बाद के वर्षों में, खासतौर पर 1988 के बाद, सामाजिक और आर्थिक लाभ के अलावा पारिस्थितिक और पर्यावरण संबंधी लाभ की ओर ध्यान अंतरित हुआ है। यद्यपि राष्ट्रीय लक्ष्य कुल भूमि क्षेत्रफल का एक-तिहाई और पहाड़ी/पर्वतीय क्षेत्रों में क्षेत्रफल का दो-तिहाई भाग वन के अधीन लाना था। इस उद्देश्य के लिए सभी निम्नीकृत और अनाच्छादित भूमि पर वनीकरण और वृक्ष रोपण का राष्ट्रीय समयबद्ध कार्यक्रम राष्ट्रीय उद्देश्य के रूप में अंगीकार किया गया था। नीति के लिये यह भी अपेक्षित था कि निर्माण की सभी परियोजनाओं जैसे बांधों/जलाशयों, खनन, औद्योगिक विकास आदि को जिनमें वन भूमि का अंतरण अंतर्निहित हो, पुनः वनीकरण द्वारा आनाच्छादित भूमि के पुनर्जनन के लिए अपने निवेश बजट में व्यवस्था करनी चाहिए। वनों के द्विवार्षिक मानचित्रण की पद्धति (उपग्रह द्वारा चाक्षुष विश्लेषण तकनीक की दूरवर्ती संवीक्षण प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके) भारतीय राष्ट्रीय वन सर्वेक्षण (1981 में स्थापित) द्वारा भी इस संबंध में की गई प्रगति के निगरानी के लिए लागू किया गया था। वन आवरण विस्तार की योजनाओं के संवर्धन के लिए दो अन्य संस्थाओं, **राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड** (NWDB) और **राष्ट्रीय वनीकरण और पारि विकास बोर्ड** (NAEB) की स्थापना 1980 के दशक के बाद के प्रमुख विकास कार्य हैं। बहुत सी योजनाएँ जैसे (i) एकीकृत वनीकरण और पारि विकास परियोजना (IAEP); (ii) ईंधन लकड़ी और चारा परियोजना योजना; (iii) गैर-काष्ठ वन उत्पाद योजना; (iv) बीज विकास योजना; (v) राष्ट्रीय वनीकरण कार्यक्रम आदि देश में वन आवरण बढ़ाने के लिए क्रियान्वित की गई है। राष्ट्रीय वानिकी कार्य योजना (NFAP) नाम की कार्य योजना 1999 में प्रारंभ की गई जिसका उद्देश्य 2007 तक भूमि क्षेत्रफल का 25 प्रतिशत और 2012 तक 33 प्रतिशत वन आवरण के अधीन लाना है। परंतु जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है, 2011 के अंत तक यह उपलब्धि लगभग 22 प्रतिशत ही रही है।

बोध प्रश्न

1) भारत में स्वतंत्रता पूर्व अवधि के दौरान कितनी वननीतियाँ अधिनियमित हुई हैं – (क) एक; (ख) दो; (ग) तीन; (घ) चार।

2) राष्ट्रीय वन नीति, 1952 के कोई तीन उद्देश्य बताइए?

.....

.....

.....

.....

3) राष्ट्रीय वन नीति, 1988 के अधिनियम से पहले हुआ ऐतिहासिक महत्त्व का मुख्य परिवर्तन क्या था? इस संबंध में हमारे निर्देशक सिद्धांतों में कौन से दो मुख्य खंड सम्मिलित किए गए थे?

.....

.....

.....

.....

.....

4) क्या आप कहेंगें कि स्वतंत्रता के बाद भिन्न-भिन्न नीति घोषणाओं द्वारा वन आवरण प्राप्त करने के लक्ष्य प्राप्त हुए हैं? लगभग 40 शब्दों में स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

9.4 वन कृषि अंतःसंबद्धता

वन शब्द का प्रयोग परंपरागत दृष्टि से केवल भूमि के विशाल क्षेत्र पर व्यापक रूप से फैली हुई प्राकृतिक वनस्पति के लिए प्रयुक्त किया जाता है। यह 'बीहड़'' की दृष्टि से प्रयोग किया जाता है जिसका अभिप्राय बहुत से वन्य पशुओं के लिए उनके प्राकृतिक वास के रूप में आश्रय देने वाली वनस्पति वृद्धि की प्रचुरता है। परंतु घटते हुए वन क्षेत्रफल के संदर्भ में उसकी वृद्धि की विस्तार करने की आवश्यकता महसूस की गई। 'वृक्ष फसल' नाम की मानव निर्मित खेती शामिल करने के लिए प्राकृतिक विशेषता का विस्तार किया गया। दूसरी ओर, शब्द कृषि का संबंध भी केवल फसल की खेती से भी आगे खेती के व्यापक रूप से है। इस विस्तारित रूप में पशुप्रजनन, मत्स्य पालन, वानिकी, डेयरी-फार्मिंग आदि शामिल हैं। वन की क्षति बहु आयामी तरीकों से महसूस की जाती है : (i) जैव विविधता की क्षति; (ii) पारिस्थितिकी असंतुलन; और (iii) पर्यावरण ह्रास। इस क्षति को कम करने के लिए सवंर्धित वानिकी की पद्धति में गैर-वन भूमि, गांव की सांझी भूमि और निजी भूमि जैसे क्षेत्रों में कृषि कार्य करना शामिल है। इस प्रकार, वानिकी के तरीकों में कृषि संपूरक है : (i) पारिस्थितिकीय रूप से मृदा, मृदा पोषक तत्वों, मृदा में आर्द्र की मात्रा और सूक्ष्म जलवायु के विनियमन के तरीके; और (ii) अल्पबेरोज़गार ग्रामीण युवाओं तथा जनजाति मानव शक्ति का कुशल उपयोग द्वारा आर्थिक रूप में हम इस कृषि-वन अंतरापृष्ठ को तीन कोणों से सविस्तार प्रतिपादित कर सकते हैं, अर्थात् (क) भूमि उपयोग स्वरूप, (ख) मानव पारितंत्र, और (ग) पारिस्थितिकीय पारितंत्र।

9.4.1 भूमि उपयोग स्वरूप

भूमि कृषि और वानिकी दोनों के लिए प्राथमिक आवश्यकता है। क्लासिकी विधियाँ, जैसे स्थानांतरी खेती, वानिकी की भूमि का प्रयोग कृषि कार्यों के लिए करती हैं। परंतु ''सामाजिक वानिकी'' की आधुनिक पद्धति के अधीन वृक्ष, फसलें, गैर वन क्षेत्रों जैसे निजी भूमि और संस्थागत परिसरों में उगाई जाती हैं। इसलिए इस प्रक्रिया में वानिकी के लिए स्थान बनाने में कृषि का महत्त्व है। इस प्रकार, कृषि वानिकी संभावनाओं की श्रेणी प्रचलन में आई हैं जिसमें उभयनिष्ट उद्देश्य है : (i) पारिस्थितिकी का संरक्षण करना; (ii) भूमि उपयोग इष्टतम करना; (iii) बाहरी कारकों, जैसे हवा और बहते जल से क्षति होने से बचाना; और (iv) स्थान/भूमि का सौंदर्य महत्त्व सुधारना। इस प्रकार वृक्ष, फसलें और पशुधन का सहनिर्वहन संभव हुआ है। सहजीवी रूप में पारितंत्र के इष्टतम उपयोगिता और संरक्षण के लिए एक-दूसरे के संपूरक हो रहे हैं।

9.4.2 मानव पारितंत्र

कृषि श्रमिकों का बहुत बड़ा भाग छोटे और सीमांत किसानों का समुदाय है। वे अपनी आय और आजीविका आवश्यकताओं के लिए वन संसाधनों, जैसे काष्ठ, MFP और बहुत से गैर-काष्ठ वन उत्पादों (जैसे औषधीय पादप, शहद, मसाले, रेजिन, बीज, गिरीदार फल आदि) पर निर्भर रहते हुए वनों के अंदर या किनारों पर रहने वाले जनजाति समुदाय के भी है। कृषि न केवल वन आधारित जनजाति जनसंख्या के लिए ऋतुनिष्ठ कार्य है बल्कि अधिकांश अन्य के लिए भी है। पादप रोपण और वन विभागों द्वारा आरंभ किए अन्य विकास कार्यों के माध्यम से मंदी के समय वन उनकी सहायता करते हैं। वनों में और अन्यत्र वृक्षों के मुख्य गौण उत्पादन ईंधन लकड़ी, ग्रामीण क्षेत्रों में भोजन पकाने और गर्मी के लिए ईंधन का सबसे बड़ा स्रोत है। यह इन कारणों की दृष्टि से है कि वन सदैव मानव पारितंत्र के अभिन्न अंग रहे हैं। वनों की संभावना पर काम करने से गांवों से शहरों में प्रवासन रोकने का उपयोगी पक्ष भी है।

9.4.3 पारिस्थितिकी पारितंत्र

वन निम्नलिखित द्वारा जैव विविधिता बनाए रखते हैं : (i) ग्लोबल वार्मिंग (भूमंडलीय तापन) कम करना; (ii) आक्सीजन और कार्बन डाईऑक्साइड अनुपात संतुलित करना; (iii) वर्षण बढ़ाना और वर्षा उत्पन्न करना; और (iv) वायु ठंडी और स्वच्छ रखना। जल अपवाह को धीमा करने, वर्षा वितरित करने, मृदा अपरदन रोकने, वायु क्षति कम करने और जल आपूर्तियों का संरक्षण करने में वनों की भूमिका, लकड़ी या अन्य वस्तुओं उत्पाद की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है। कृषि उत्पादन और वृद्धि पर इन सभी कारकों का संचयी प्रभाव वस्तुतः अमापनीय है। पारिस्थितिकीय प्राचलों पर वनों का सकारात्मक प्रभाव सदा अत्यन्त सुसंगत का रहा है। इसे पहले की अपेक्षा हाल ही में हुए अंधाधुध औद्योगिक और शहरी विस्तार जैसे कारकों द्वारा उत्पन्न पारितंत्र की क्षति के कारण अधिक अनुभव किया जा रहा है।

9.5 सामाजिक वानिकी के प्रकार

मानव जनसंख्या से दबाव बढ़ने के फलस्वरूप प्राकृतिक वन समाप्त हो रहे हैं। इसलिए राष्ट्रीय कृषि आयोग (1976) ने सामाजिक वानिकी की अवधारणा के लिए अंतरिम

सिफारिश की। अवधारणा में मुख्तया समस्त उपलब्ध भूमि पर, (विशेषकर परंपरागत वन क्षेत्रों के बाहर) वृक्ष और अन्य वनस्पति उगाने की संकल्पना की ताकि भूमि उपयोग संतुलित रखा जा सके। इसका उद्देश्य वनों से अधारणीय निकासी भी न्यूनतम करना है। कृषि वानिकी को सामाजिक वानिकी का अभिन्न अंग रखा गया था और इस प्रकार खाद्यान्न फसलों का उत्पादन भी रखा गया। योजना का उद्देश्य न केवल ग्रामीण गरीबी का उन्मूलन करना था बल्कि समग्र रूप में समाज की सामाजिक-आर्थिक दशाएँ सुधारना भी था। इस दृष्टिकोण के पीछे बुनियादी उद्देश्य वनों पर दबाव न्यूनतम करने के लिए अकृष्य भूमि पर ईंधन-खाद्य-चारा उत्पादन करना था। सामाजिक वानिकी के अन्य उद्देश्य निम्नलिखित थे :

- गोबर के स्थान पर ग्रामीण क्षेत्रों में ईंधन लकड़ी आपूर्ति मुहैया कराना क्योंकि गोबर का बेहतर उपयोग खाद के रूप में हो सकता है;
- शहरी निर्माण आवश्यकताओं के लिए काष्ठ के अलावा, ग्रामीण आवास और कृषि औजारों के लिए छोटी काष्ठ आपूर्ति करना;
- पशुओं को हरा चारा मुहैया करना; और
- वायु और वन्य पशुओं से कृषि क्षेत्रों की रक्षा करना। इसका प्रयोग सड़कों, स्कूल के मैदानों, सामुदायिक भवनों, ग्राम की सामान्य पूर्ति और गांव के प्रवेश मार्गों के साथ-साथ शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में किया जाना था। इस व्यवस्था के अंतर्गत कृषि के भिन्न-भिन्न रूपों को सम्मिलित किया जाना था, जैसे (i) फार्म वानिकी; (ii) विस्तार वानिकी; (iii) कृषि वानिकी; और (iv) मनोविनोद वानिकी।

9.5.1 फार्म वानिकी

फार्म वानिकी का संबंध मुख्यतया नकदी फसल के रूप में अलग-अलग किसानों द्वारा अपनी खेत भूमि पर वृक्षों को उगाने से है। खेतों और ग्राम भूमि पर वानिकी से अन्य कार्यों को जोड़ने के माध्यम के रूप में इसकी संकल्पना की गई थी। इसके क्रियान्वयन के लिए आकर्षण सामान्यता उन धनी किसानों तक रहा जिनके पास लंबी-चौड़ी ज़मीन थी और अन्य अवधि की प्रजातियों से लाभ प्राप्त करने के बेहतर संसाधन थे। फिर भी, अपेक्षाकृत कम संसाधन युक्त गरीब किसानों के लिए अल्प निवेश से भी आकर्षक लाभ प्राप्त करने की गुंजाइश थी। इस व्यवस्था के अधीन यूक्लिपटस जैसी प्रजातियों को उगाने के लिए परिवर्ती ''परिधीय पादपरोपण'' अपना गया ताकि किसानों की तात्कालिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए पूरक आय मुहैया हो सके। परिधीय पादपरोपण के लिए कम प्रबंधकीय दक्षता और स्थान की आवश्यकता कम होने की आशा की जाती है। इसलिए यह छोटे किसानों के लिए अधिक उपयुक्त है। इसके समानांतर विशाल भूमि का स्वामित्व होने के कारण धनी किसानों के लिए ''खंड पादपरोपण'' है। इस शब्द का अभिप्राय परिपक्वता की लंबी अवधि के वृक्षों का रोपण है।

9.5.2 विस्तार वानिकी

इस व्यवस्था में गांव की सामान्य पंचायत भूमि सहित उपयुक्त बंजर भूमि पर ध्यान देने और पत्तीदार चारा और फल उगाने जैसे मिश्रित वानिकी प्रथा की संकल्पना की गई है। निम्नीकृत वनभूमि का नवनीकरण, रेलवे लाइनों, नहर और नदी के किनारे

तेज़ी से बढ़ने वाले वृक्षों का रोपण, आदि भी विस्तार वानिकी का भाग है। ये कार्य प्रायः सरकारी विभागों, NGOs, ग्राम समुदाय आदि द्वारा सरकारी वित्तीय सहायता या बाहरी वित्त पोषण स्रोतों की सहायता से किए जाते हैं। लाइनों (जैसे रेलवे लाइन, सड़कों के किनारे, नदी के तट, आदि) या भूमि की पट्टियों में प्लांटेशन की गुंजाइश ध्यान में रखते हुए विस्तार वानिकी के परिवर्ती के रूप में भी शब्द ''पट्टी पादपरोपण'' प्रचलित है। पट्टी पादपरोपण का उद्देश्य था : (i) यात्रियों को छाया प्रदान करना; (ii) सड़कों, रेलवे लाइनों और नदी तटों की शोभा बढ़ाना; (iii) ईंधन लकड़ी और चारा की आपूर्ति बढ़ाना; और (v) पारिस्थिति की संतुलन और ग्रीनहाऊस प्रभाव नियंत्रित रखना।

9.5.3 कृषि वानिकी

फसल और वानिकी में अंतरापृष्ठ है। आजकल वानिकी और कृषि उसी भूमि पर की जा रही है। यह कृषि वनवर्धन के अधीन आने वाले बहुत या मिश्रित फसल स्वरूप की अवधारणा है। भारत जैसे शीतोष्ण देश के लिए मृदा अपरदन नियंत्रण करने, मृदा पोषण तत्व और कूड़ा-करकट आदि गिरने से उर्वरता समृद्ध करने में इसकी क्षमता ध्यान में रखते हुए इसका विशेष नाम है। इस व्यवस्था में मुख्य विचारों में एक मृदा और कृषि जलवायु दशाओं की स्थानीय किस्म के समरूप जातियों की पहचान करना है। इसलिए उन प्रजातियों को उचित महत्त्व दिया जाता है जो स्थानीय दशाओं के अनुकूल उत्पादकता दशाओं में पूरक होते हैं।

9.5.4 मनोविनोद वानिकी

इसका संबंध शहरी क्षेत्रों में ऐसे घने अरण्य क्षेत्र सहित बड़े पार्कों से है जो मनोविनोद और साहसिक कार्य दोनों के लिए शहरी निवासियों को वन जैसी स्थिति दे सके। शहरों में हरित आवरण बढ़ाने के अलावा ट्रेकिंग क्षेत्र और अन्य मनोविनोद संबंधी सुविधाओं का विकास इस प्रकार की वानिकी का उद्देश्य है।

बोध प्रश्न 3

नीचे दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50 शब्दों में लिखिए।

1) उन तीन प्रमुख आयामों का उल्लेख कीजिए जिनमें वनों की क्षति मानव जाति के लिए क्षति प्रतीत होती है।

.....

.....

.....

.....

2) उन दो पहलुओं की रूपरेखा बताइए जिनमें वानिकी को कृषि का पूरक कहा जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

3) उन पांच शीर्षकों का उल्लेख कीजिए जिनमें वनों को हमारी जैव विविधता के संरक्षक के रूप में माना जाता है।

.....

.....

.....

.....

5) ''पट्टी पादपरोपण'' के चार प्रमुख उद्देश्य क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

9.6 संयुक्त वन प्रबंधन

1988 की राष्ट्रीय वन नीति ने निर्दिष्ट किया है कि वनों के प्रबंधन में लोगों की सहभागिता आवश्यक है। परंतु इसने वनों के दिन प्रति दिन के प्रबंधन में लोगों की किसी प्रत्यक्ष भूमिका का संकल्पना नहीं की है। स्थानीय समुदायों को संबद्ध करने की आवश्यकता पर जागरूकता बढ़ती जा रही है ताकि जैव विविधता का मूल्यांकन करने का उनके अपने तरीकों का सम्मान हो सके, संरक्षण उपायों में प्रयुक्त किया जा सके। इस चिंतन के आधार पर 1990 के दशक के दौरान प्रारंभ किये गये संयुक्त वन प्रबंधन (JFM) दृष्टिकोण ने स्वामियों के रूप में राज्य वन विभागों और ''सह प्रबंधकों'' के रूप में स्थानीय समुदायों के बीच धारणीय वन प्रबंधन के लिए भागीदारी विकसित की। इस प्रकार JFM को भारत में वन प्रबंधन के लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की दिशा में एक कदम के रूप में देखा गया।

1991 में भारत सरकार ने ''रक्षित क्षेत्र प्रबंधन का पारि विकास'' नाम की योजना प्रारंभ की। नीति का उद्देश्य रक्षित क्षेत्र के प्रबंधन और निर्णयों में स्थानीय सहभागिता के लिए अवसर बढ़ाकर जैव विविधता के संरक्षण से स्थानीय क्षेत्र आर्थिक विकास के उद्देश्यों को जोड़ना है। परियोजना के अन्य उद्देश्य थे : (i) प्रभावित लोगों के आजीविका तत्वों पर सरकार की नीति के नकारात्मक प्रभावों को कम करना; (ii) रक्षित क्षेत्रों के पारि विकास के लिए अधिक प्रभावी समर्थन विकसित कर परियोजना का प्रभावकारी प्रबंधन सुनिश्चित करना; और (iii) ऐसे तरीके से भावी जैव विविधता तैयार करना जो स्थानीय क्षेत्र के विकास संबंधी आवश्यकताओं के अनुरूप हो। पारि विकास कार्यों का नियंत्रण ग्राम पारि विकास समितियों (VEC) द्वारा किया जाना चाहिए। उद्देश्य वैकल्पिक फार्म-इतर आय उत्पन्न करने के अवसरों की सुलभता सुकर बनाकर स्थानीय लोगों की वनों पर निर्भरता कम करना है। दूसरे शब्दों में, योजना में सशक्तीकरण द्वारा प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन में लोगों की सहभागिता की संकल्पना की गई थी। परंतु यह अनुभव किया जा रहा है कि संरक्षण प्रयासों में स्थानीय लोगों को शामिल करना कठिन हुआ है क्योंकि लोगों की सहभागिता के लिए क्रियाविधियाँ विकसित करने के पिछले बहिष्करण दृष्टिकोण असफल हुए, इसका परिणाम हुआ कि स्थानीय समुदायों

में रुचि और विकास का अभाव है। कहीं न कहीं कानूनों के पारस्परिक विरोध भी उत्तरदायी थे। JFM ग्रामीणों को वन उत्पाद का अंश प्रदान करने का प्रयास करता है, तो वन्यजीव कानून राष्ट्रीय उद्यानों और पशु विहारों से मानव प्रयोग के लिए (कुछ सूचीबद्ध उत्पादों को छोड़कर) उत्पादों का निकर्षण निषिद्ध करते हैं।

कुछ असफलताओं के बावजूद भावी वन विकास प्रयासों में JFM दर्शन आगे बढ़ाने की आवश्यकता व्यापक रूप से स्वीकार की गई है। अब वन विकास के लिए नई परियोजनाओं के सरकार और बाहरी एजेंसियों द्वारा वित्तीय सहायता प्राप्त करने के लिए केंद्रीय व्यवस्था रखी गई है। लगभग सभी राज्यों ने JFM में स्थानीय समुदायों की सहभागिता से JFM में कार्य करना प्रारंभ कर दिया है, मध्य प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा राज्यों में अधिकतम कार्य हुआ है। 2005 तक भारतीय संघ के 27 राज्यों में 63,000 से अधिक वन संरक्षण समितियाँ थीं जो भारत में वन भूमि के 1,40,000 वर्ग कि.मी. से अधिक संयुक्त प्रबंधन कर रही थीं।

9.7 सारांश

इस इकाई में, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए वनों के महत्त्व पर चर्चा की गई है। भारत विश्व के उन शीर्ष दस देशों में आता है जिनका सांझा वन आवरण का अंश दो-तिहाई है। परंतु वन के प्रति व्यक्ति अंश के अनुसार, भारत इन दस देशों में सबसे नीचे है। यद्यपि भारत ने काफी पहले 1952 में वनों के अधीन अपने कुल भूमि क्षेत्रफल का एक-तिहाई (अर्थात् 33 प्रतिशत) करने का लक्ष्य रखा था परंतु 2010 तक भी भारत में वन आवरण का प्रतिशत लगभग 22 प्रतिशत है। वन कृषि सहबंधन बहुस्तरीय है और इसे हमारे सभी वन नीति प्रलेखों में अच्छी तरह से माना गया है। इसके प्रकाश में देश में वन आवरण की रक्षा करने और विस्तार करने के लिए सरकार द्वारा बहुत उपाय किए गए है। यद्यपि इन सभी नीतियों ने सीमित परिणाम दिए है। परंतु बहुत देर बाद व्यापक रूप से स्वीकृत दृष्टिकोण है कि केवल संयुक्त रूप से नियंत्रित व्यवस्थित दृष्टिकोण यही जिसमें जनजाति, गरीब और छोटे तथा सीमांत किसान जैसे वनों के मुख्य पणधारी खास तौर पर शामिल किए जाने हैं, ताकि वे सब मिलकर इस संबंध में नियत परिणाम प्राप्त करने के लिए कार्य कर सकें।

9.8 शब्दावली

हरित लेखांकन : आय लेखांकन की परंपरागत पद्धति में उन वर्तमान उत्पादन में प्रयुक्त पर्यावरण संबंधी संसाधनों में परिवर्तनों की जो वन के अंतिम भाग है, उपेक्षा की, जाती है। हाल के वर्षों में वन संसाधनों के अचिन्हित लाभों को सम्मिलित कर GDP जैसे राष्ट्रीय आय सेवाओं के परंपरागत उपायों का संशोधन करने के प्रयास किए गए हैं। यह हरित लेखांकन कहा जाता है।

वनभूमि और वन आवरण : वन भूमि की परिभाषा वन के रूप में साविधिक रूप से अधिसूचित भूमि के रूप में की गई है। यह संभव है कि इस अधिसूचित भूमि के कुछ भाग पर वन आवरण हो। दूसरी ओर, प्रतिशत

आवरण के आधार पर परिभाषित ''वृक्ष आवरण वितान सघनता'' की सीमा भी निर्धारित की गई है।

सघन वन, खुलावन और क्षुप क्षेत्र : आवरण की सीमा के आधार पर वनों को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है जैसे सघन वन, खुला वन और क्षुप क्षेत्र। यद्यपि सघन वन वे कहलाते हैं जिनका विकास आवरण 40 प्रतिशत से अधिक हो, खुला वन जिनका 10 से 40 प्रतिशत की सीमा में हो। क्षुप क्षेत्र में विकास आवरण 10 प्रतिशत से कम होता है।

रक्षित वन और आरक्षित वन : रक्षित वन वे हैं जिनमें काष्ठ, ईंधन लकड़ी, लघु वन उत्पाद आदि के संग्रहण के लिए समुदाय के अधिकार या तो सीमित होते हैं या निलंबित होते हैं। दूसरी ओर आरक्षित वनों में स्थानीय समुदाय वन अधिकारों का उपयोग करते हैं यद्यपि यहाँ भी कुछ प्रतिबंध लागू हो सकते हैं।

कृषि वनवर्धन, वनपशुचारा : कृषि और वानिकी का संयोजन करने की प्रणाली।

प्रणाली और कृषि पशुचारा प्रणाली : कृषि संवर्धन के रूप में जानी जाती है। वानिकी और पशुधन का वनपशुचारा (agro-silvirpastoral) प्रणाली के रूप में जानी जाती है। तीनों अर्थात् कृषि, वानिकी और पशुधन के सहअस्तित्व को कृषि वन पशुचारा प्रणाली कहा जाता है।

सामाजिक वानिकी : सामाजिक वानिकी जिसमें अपह्रास भूमि की हरियाली, कृषि संसाधनों की वृद्धि, ग्रामीण सेक्टर में रोज़गार पैदा करने आदि के लिए कार्य योजना होती है। सभी का उद्देश्य बिगड़ी हुई पारिस्थितिकी संतुलन ठीक करना है।

9.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Jha, L. K. (1994): India's Forest Policies, Ashish Publishing House, New Delhi.

Agarwal, V. P., (1998): Forests in India, Oxford & IBH Publishing Co., New Delhi.

Sharma, B. L. and R. L. Vishnoi, (2000): Perspective on Social Forestry, Daya Publishers, New Delhi.

United Nations, (2010): Global Forest Resources Assessment 2010, http://www.fao.org/forestry/fra/fra2010/en/

Wikepedia, http://en.wikipedia.org/wiki/Joint_Forest_Management, Joint Forest Management.

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

1) (क)

2) (ग)

3) देखिए भाग 9.2 और उत्तर दीजिए

बोध प्रश्न 2

1) (ग)

2) देखिए उपभाग 9.3.2 और उत्तर दीजिए

3) देखिए उपभाग 9.3.3 और उत्तर दीजिए

4) देखिए उपभाग 9.3.4 और उत्तर दीजिए

बोध प्रश्न 3

1) देखिए भाग 9.4 और उत्तर दीजिए

2) देखिए भाग 9.4 और उत्तर दीजिए

3) देखिए उपभाग 9.4.3 और उत्तर दीजिए

4) देखिए उपभाग 9.5.2 और उत्तर दीजिए।